**ओ३म्**

**‘महर्षि दयानन्द ने खण्डन-मण्डन, समाज सुधार व वेद प्रचार क्यों किया?’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

महर्षि दयानन्द ने सन् 1863 में दण्डी स्वामी प्रज्ञाचक्षु गुरू विरजानन्द से अध्ययन पूरा कर कार्य क्षेत्र में पदार्पण किया था। उन दिनों में देश में अज्ञान, धार्मिक व सामाजिक अन्घविश्वास, कुरीतियां व अधर्म इतना अधिक बढ़ गया था कि इन बुराईयों से मुक्त होने का न तो किसी के पास कोई उपाय था और न ही कोई प्रभावशाली प्रयास ही किसी के द्वारा किया जा रहा था। **यदि महर्षि दयानन्द वह कार्य न करते जो उन्होंने किए हैं, तो देश व समाज की स्थिति और कहीं अधिक विषम व जटिल होती जिसका लाभ कुछ स्वार्थी व समाज के शत्रुओं को मिलता परन्तु वैदिक धर्म व संस्कृति की अपूरणीय क्षति होती।** यह निश्चित है कि हमारा देश व समाज आज जिस स्थिति में है, वह वैसा कदापि न होता अपितु इससे कहीं अधिक पिछड़ा, कमजोर व विद्रूप होता। **महर्षि दयानन्द ने अपनी सभी धार्मिक व सामाजिक मान्यताओं से सम्बन्धित एक विश्व प्रसिद्ध ग्रन्थ की रचना की है जिसका नाम सत्यार्थ प्रकाश है।** इस ग्रन्थ में उन्होंने प्रथम 10 समुल्लासों में अपनी वेदों पर आधारित सभी मान्यताओं को प्रस्तुत किया है। इसके बाद अन्तिम चार सम्मुल्लासों में उन्होंने देश व विदेशी मत-मतान्तरों व धर्मों की मिथ्या मान्यताओं को प्रस्तुत कर उनकी समीक्षा वा खण्डन तर्क, युक्ति, प्रमाण आदि से किया है जो कि असत्य के छोड़ने और सत्य के ग्रहण करने के आवश्यक व अपरिहार्य है। यदि मनुष्य अपने असत्य को जानकर उसे छोड़ेगा नहीं तो उसका पतन तो अवश्यम्भावी है ही साथ हि उसकी धार्मिक, आत्मिक, बौद्धिक व सामाजिक उन्नति कभी नहीं हो सकती। **सर्वांगीण उन्नति का एकमात्र उपाय व साधन सत्य को ग्रहण करना व असत्य को छोड़ना है और इसके लिए अपने व दूसरे के असत्य का खण्डन व अपने व दूसरों के सत्य का मण्डन व प्रशंसा भी आवश्यक है।**

**मनमोहन कुमार आर्य**

सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ के ग्यारहवें समुल्लास में आर्यावर्त्तीय अर्थात् भारत के मत-मतान्तरों का खण्डन-मण्डन है। मनुष्य की उन्नति के लिए यह खण्डन व मण्डन अनिवार्य व अपरिहार्य है। इसे इस प्रकार भी समझ सकते हैं कि जैसे एक अध्यापक अपने शिष्य व विद्यार्थी को सत्य बातों का ज्ञान कराता है और उसके जीवन में जो असत्य आचरण, व्यवहार व अज्ञान है, उसे जता व बता कर उसे छुड़वाता है। डाक्टर भी रोगी को रोग के कारण बताकर उसका खानपान ठीक करने के साथ उसका आचरण व व्यवहार भी ठीक करता है और उसे ओषधियां इस लिए देता है कि जिससे मिथ्या व असत्य कर्मों, खानपान व दिनचर्या की अनियमितता आदि अवगुणों के कारण उत्पन्न रोग दूर हो जायें। मिथ्या विचारों व मान्यताओं का खण्डन-मण्डन करने से पूर्व महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के ग्यारहवें समुल्लास की एक अलग से मार्मिक अनुभूमिका लिखी है। वह लिखते हैं कि **यह सिद्ध बात है कि पांच सहस्र वर्षों के पूर्व वेदमत से भिन्न दूसरा कोई भी मत न था, क्योंकि वेदोक्त सब बातें विद्या से अविरूद्ध हैं। वेदों की अप्रवृत्ति होने का कारण महाभारत युद्ध हुआ। इनकी अप्रवृत्ति से अविद्याऽन्धकार के भूगोल में विस्तृत होने से मनुष्यों की बुद्धि भ्रमयुक्त होकर जिसके मन में जैसा आया वैसा मत (वर्तमान में धर्म) चलाया। उन सब मतों में चार मत, अर्थात् जो वेदविरूद्ध पुराणी, जैनी, किरानी और कुरानी सब मतों के मूल हैं। वे क्रम से एक के पीछे दूसरा तीसरा चैथा चला है। अब इन चारों की शाखा एक सहस्र से कम नहीं है। इन सब मतवादियों, इनके चेलों और अन्य सबको परस्पर सत्यासत्य के विचार करने में अधिक परिश्रम न हो, इसलिये (महर्षि दयानन्द ने) यह ग्रन्थ (सत्यार्थ प्रकाश) बनाया है।**

वह आगे लिखते हैं कि जो जो इस (ग्यारहवें) समुल्लास में सत्य मत का मण्डन और असत्य मत का खण्डन लिखा है, वह सबको जनाना ही प्रयोजन समझा गया है। इसमें जैसी मेरी (महर्षि दयानन्द की) बुद्धि, जितनी विद्या, और जितना इन चारों मतों के मूल ग्रन्थ देखने से बोध हुआ है उसको सब के आगे निवेदित कर देना मैंने उत्तम समझा है। क्योंकि गुप्त व विलुप्त हुए विज्ञान का पुनः मिलना सहज नहीं है। पक्षपात छोड़कर इस सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ को देखने से सत्यासत्य मत सबको विदित हो जायगा। इसके पश्चात् सबको अपनी-अपनी समझ के अनुसार सत्य मत का ग्रहण करना और असत्य मत का छोड़ना सहज होगा। महर्षि दयानन्द जी आगे कहते हैं कि इनमें से जो पुराण आदि ग्रन्थों में शाखा-शाखान्तर रूप मत आर्यावर्त्त देश में चले हैं, उनका संक्षेप से गुण-दोष इस 11 वें समुल्लास में दिखाया जाता है। इस मेरे कर्म से यदि पाठक उपकार न माने तो विरोध भी न करें। **क्योंकि मेरा तात्पर्य किसी की हानि या विरोध करने में नहीं, किन्तु सत्यासत्य का निर्णय करने कराने का ही है। इसी प्रकार सब मनुष्यों को न्यायदृष्टि से वत्र्तना अति उचित है। मनुष्य जन्म का होना सत्यासत्य का निर्णय करने-कराने के लिए है, न कि वादविवाद विरोध करने कराने के लिये। इसी मत-मतान्तर के विवाद से जगत् में जो-जो अनिष्ट फल हुए, होते हैं और होंगे, उनको पक्षपातरहित विद्वज्जन जान सकते हैं।**

एक अत्यन्त महत्वपूर्ण बात वह यहां यह भी कहते हैं कि जब तक इस मनुष्य जति में मिथ्या मतमतान्तरों का परस्पर विरूद्ध वाद न छूटेगा, तक तक अन्योऽन्य को आनन्द न होगा। यदि हम सब मनुष्य और विशेष कर विद्वज्जन ईर्ष्या-द्वेष छोड़कर सत्यासत्य का निर्णय करके सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग करना कराना चाहें, तो हमारे लिये यह बात असाध्य नहीं है। यह निश्चय है कि इन (मत-मतान्तरों के) विद्वानों के विरोध ही ने सबको विरोध जाल में फंसा रक्खा है। यदि ये लोग अपने प्रयोजन में न फंसकर सबके प्रयोजन को सिद्ध करना चाहें, तो अभी ऐक्यमत हो जायें। इसके होने की युक्ति महर्षि दयानन्द जी ने अपने सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ की पूर्ति पर **‘स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश’** शीर्षक के अन्तर्गत दी है। खण्डन-मण्डन विषयक ग्यारहवें समुल्लास की अनुभूमिका की समाप्ति पर वह ईश्वर से प्रार्थना करते हुए कहते हैं कि **सर्वशक्तिमान् परमात्मा एक मत में प्रवृत्त होने का उत्साह सब मनुष्यों के आत्माओं में प्रकाशित करें।**

महर्षि दयानन्द जी के आशय व अभिप्राय को जान लेने के बाद अब हम लेख के शीर्षक पर संक्षिप्त विचार करते हैं। महर्षि दयानन्द ने अपने कार्यकाल में असत्य विचारों व मान्यताओं का खण्डन व सत्य मान्यताओं का मण्डन किया। झूठ को झूठ और सत्य को सत्य कहना क्या गलत है? हम समझते हैं कि उनके इस खण्डन कार्य को कोई निष्पक्ष व्यक्ति बुरा व गलत नहीं कह सकता। महर्षि दयानन्द ने वेद, तर्क, युक्ति व अन्य प्रमाणों के आधार पर मूर्तिपूजा, अवतारवाद, फलितज्योतिष, बालविवाह, जन्मना जाति व्यवस्था, ऊंच-नीच, छुआ-छूत, अशिक्षा, अज्ञान, अन्धविश्वास, कुरीतियों आदि का खण्डन किया। इसके साथ ही उन्होंने वेद आदि विद्या के ग्रन्थों के अध्ययन, संस्कृत व हिन्दी भाषा को सीखने व उसके प्रयोग करने, निराकार-सर्वशक्तिमान-सच्चिदानन्द ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना-उपासना, अविद्या का नाश तथा विद्या की वृद्धि, विधवा विवाह, गुण-कर्म-स्वभावानुसार वर्ण व्यवस्था आदि का समर्थन किया। वह स्त्री व शूद्रों की शिक्षा व समान अधिकारों के समर्थक थे तथा सामाजिक विषमता के विरोधी थे। अतः उनका यह खण्डन व मण्डन किसी भी प्रकार से अनुचित न होकर समाजोन्नति व देशोन्नति के लिए अपरिहार्य है। महर्षि दयानन्द ने इस खण्डन व मण्डन के साथ समाज सुधार के एक नहीं अपितु सभी प्रकार के कार्य किये। स्वामीजी ने स्त्री व शूद्र आदि सबको वेदाध्ययन का अधिकार दिया जो कि विगत 5000 वर्षों से बन्द था। उन्होंने गुण-कर्म-स्वभाव पर आधारित वर्ण व्यवस्था की वकालत की और जन्मना जाति व्यवस्था के विरोध सहित युवक व युवती के विवाह भी गुण-कर्म व स्वभाव पर आधारित करने की सलाह दी। आत्मिक व बौद्धिक उन्नति के लिए उन्होंने ईश्वर के सत्यस्वरूप का प्रचार किया। उनके अनुसार **ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यमी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र, सृष्टिकर्त्ता एवं एकमात्र ध्यान व उपासना के योग्य है।** इन गुणों के अनुसार ही उन्होंने ईश्वर का ध्यान करने वा उसकी स्तुति-प्रार्थना-उपासना करने का प्रचार किया। महर्षि दयानन्द ने देश को प्रार्थना व स्तुति की सन्ध्योपासना, आर्याभिविनय, सोलह संस्कार कराये जाने हेतु संस्कार विधि एवं वैदिक सिद्धान्तों को जानने के लिए ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका आदि अनेक विषयों की पुस्तकें लिख कर व प्रकाशित कर प्रदान की। उनके यह सभी कार्य समाज सुधार के प्रेरक, संवर्धक व उन्नति के कारक हैं। इन्हीं खण्डन-मण्डन व समाज सुधार के कार्यों में वेद प्रचार का कार्य भी निहित है।

वेद प्रचार का अर्थ वेदों के ज्ञान का विश्व के मानवमात्र में समान रूप से प्रचार व प्रसार है। वेदों के ज्ञान के प्रकाश से आलोकित आत्मा का अभ्युदय होकर उसे निःश्रेयस की प्राप्ति होती है जो कि संसार की अन्य किसी जीवन शैली व मत-मतान्तरों की पूजा पद्धति से सम्भव नहीं है। तर्क व युक्तियों से सिद्ध मोक्ष का वर्णन ही किसी धर्म पुस्तक में उपलब्ध नहीं होता तो फिर उनके अध्ययन व आचरण से मोक्ष कैसे प्राप्त हो सकता है? इसका अनुमान तुलनात्मक अध्ययन करने पर सभी मतों के सुहृद जनों को स्वतः होता है। सामान्य पठित मनुष्यों की सहायता के लिए महर्षि दयानन्द ने ईश्वरीय ज्ञान वेदों का संस्कृत व हिन्दी भाषा में भाष्य वा सरल अनुवाद भी किया है जिसे सभी को पक्षपात छोड़कर पढ़ना चाहिये। वेद ईश्वर की वाणी होने के कारण सबके लिए हितकर व सबका कल्याण करने वाली है। देश व विश्व की उन्नति का आधार मिथ्या मत-मतान्तरों का पराभव और विश्व में एक सत्य मत, जिसका पर्याय वेदमत है, का उदय होना ही हो सकता है। महर्षि दयानन्द ने जब वेद भाष्य का आरम्भ किया था तो अनुमान किया था कि जब उनका किया जाने वाला वेदभाष्य पूरा हो जायेगा तो संसार से अज्ञान तिमिर विनष्ट होकर संसार में धर्म व ज्ञान के क्षेत्र में सूर्य का सा प्रकाश हो जायेगा कि जिसको रोकने, हटाने व ढापने का सामर्थ्य किसी मत-मतान्तर के मानने वालों में नहीं होगा। आज हमें वेद ज्ञान तो उपलब्ध है परन्तु मत-मतान्तरों द्वारा फैलाये गये व फैलाये जाने वाले अज्ञान व अन्धकार को छोड़ने के लिए सुविधा भोगी व अभावग्रस्त मनुष्य तत्पर ही नहीं हो पा रहे हैं। संसार में जिसका आदि व आरम्भ होता है उसका अन्त भी अवश्य होता है। यह शाश्वत सिद्धान्त है। महाभारत काल से भोगवादी संस्कृति व जीवनशैली का आरम्भ हुआ था। आरम्भ होने के कारण इसका अन्त भी अवश्य होना ही है। वह दिन अवश्य आयेगा जब भोगवाद व मिथ्या मत-मतान्तरवाद का क्षय होगा और सत्य वैदिक धर्म का सर्वत्र आचरण व व्यवहार होगा। वह दिन महर्षि दयानन्द द्वारा आरम्भ खण्डन-मण्डन-समाज-सुधार व वेद प्रचार की सुखद परिणति का दिन होगा। हमें बस को जानने में तत्पर रहना, उसे न छोड़ना और उसका यथाशक्ति प्रचार करना है जिससे लक्ष्य शीघ्र प्राप्त हो सके। इन्हीं शब्दों के साथ इस लेख को विराम देते हैं।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**